इकाई 4 नवपाषाण काल*

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 जलवायु और जीविका निर्वाह में परिवर्तन

4.3 नवपाषाण संस्कृति

4.3.1 नवपाषाण क्रांति की अवधारणा

4.3.2 शिकार-भोजन संग्रह से कृषि के संक्रमण के बारे में वाद-विवाद

4.3.3 वैश्विक संदर्भ में नवपाषाण काल

4.3.4 नवपाषाण और समकालीन संस्कृतियां

4.4 भारत की नवपाषाण संस्कृतियां

4.4.1 उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

4.4.2 उत्तरी क्षेत्र (कश्मीर) की नवपाषाण संस्कृति

4.4.3 विंध्य पहाड़ियों की नवपाषाण संस्कृति, बेलन व गंगा नदी की घाटियाँ

4.4.4 मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

4.4.5 मध्य-पूर्वी भारत की नवपाषाण संस्कृति

4.4.6 पूर्वोत्तर भारत की नवपाषाण संस्कृति

4.4.7 दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति

4.5 सामाजिक संगठन और आस्था प्रणाली

4.6 सारांश

4.7 शब्दावली

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढने के पश्चात आप जानेंगे :

- भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न भागों में कृषि की शुरुआत के बारे में;
- पशुपालन का विकास और शिकार-भोजन संग्रहण से कृषि की ओर संक्रमण के बारे में;
- भारत क्षेत्रीय पृष्ठभूमि में नवपाषाण संस्कृतियों के बारे में;
- मेहरगढ़ स्थल के महत्व के बारे में; तथा
- दक्षिण भारतीय नवपाषाण संस्कृति की विशिष्ट विशेषता, राख के टीलों के बारे में।

4.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नवपाषाण संस्कृति की परिभाषा, प्रकृति और विशेषताओं के बारे में विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया गया है। इसमें भारतीय नवपाषाण युग के बारे में केंद्रित अध्ययन पर चर्चा की गयी है।

* प्रो. वी. सेल्वा कुमार, समुद्री इतिहास और समुद्री पुरातत्व विभाग, तमिल विश्वविद्यालय, तंजावुर।

नवपाषाण मानव संस्कृति के इतिहास का एक बहुत महत्वपूर्ण चरण था जब मानव पूरी तरह से प्रकृति पर निर्भर नहीं था तथा उसने अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए प्रकृति का दोहन करना शुरू कर दिया था। प्रकृति के साथ मनुष्यों के लंबे जुड़ाव ने उसे कुछ पौधों और जानवरों की उपयोगिता को समझने में सक्षम बनाया, जिसमें वे अपनी आवश्यकताओं के अनुसार बदलाव कर सकते थे। उन्होंने कुछ जानवरों को कृषि कार्य में सहायता के लिए पालना शुरू किया तथा कुछ उपयोगी किस्मों की खेती करके भोजन की आत्मनिर्भरता की दिशा में कदम बढ़ाया। कृषि के लिए जंगल साफ करना और भूमि को जोतना आवश्यक था। खानाबदोश जीवन से निकलकर लोग गाँवों में बसने लगे तथा नई तकनीकों के साथ बने नए-नए उपकरण इस्तेमाल किए जाने लगे। यद्यपि निर्वाह के लिए पौधे उगाना और जानवरों का पालन आदि नई रणनीतियों का शुभारम्भ था किंतु शिकार और भोजन इकट्ठा करने जैसे पुराने तरीके बदस्तूर जारी रहे।

4.2 जलवायु और जिविका-निर्वाह में परिवर्तन

प्रगैतिहासिक काल को विभिन्न सांस्कृतिक युगों में विभाजित किया गया है जैसे, पुरापाषाण युग, मध्य पाषाण युग, नवपाषाण युग और ताम्रपाषाण युग। इन युगों में नवपाषाण युग, पुरापाषाण युग व मध्य पाषाण युग के बाद आया तथा ताम्रपाषाण युग से पहले आया। पुरापाषाण और मध्य पाषाण युग में मनुष्य भोज्य पदार्थ का उत्पादन नहीं करते थे। वे जानवर नहीं पालते थे तथा उस समय खेती करना प्रारम्भ नहीं हुआ था। वे प्राकृतिक रूप से उपलब्ध पौधों के भोजन जैसे कि कंद, फल, पत्ते और फलियाँ इकट्ठा करते, मछलियाँ मारते और जंगली जानवरों का शिकार करते थे। यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि मध्य पुरापाषाण काल के उत्तरार्ध व उच्च पुरापाषाण काल के पूर्वार्द्ध में लोग किसी भी प्रकार का बाग़वानी कार्य, पौधों की रोपाई या जानवरों को पालने का कार्य करते थे। प्रागैतिहासिक काल का सामाजिक संगठन जानवरों के शिकार, जंगलों से खाद्य पदार्थ इकट्ठा करने का कार्य से प्रभावित था। शिकार और जंगल से एकत्र किया भोजन सीमित होता था तथा इसे खा कर तुरंत खत्म करना पड़ता था। इस अवधि में लोगों ने छोटे-छोटे समूहों में रहना शुरू कर दिया था तथा जिस क्षेत्र में संसाधन भरपूर होते थे उधर लोग बडे-बड़े समूहों मे रहने लगे थे।

दुनिया के कुछ हिस्सों में अभिनूतन (Holocene) काल की शुरुआत में कई सांस्कृतिक परिवर्तन हुए, जिससे नवपाषाण संस्कृतियों का विकास हुआ। हिमयुग की समाप्ति के पश्चात दुनिया के कई हिस्सों में अतिकालीन प्रातिनूतन काल से अभिनूतन काल तक के संक्रमण के दौरान जलवायु में प्रमुख बदलाव के बारे में बताया गया है। दुनिया भर में गर्म जलवायु शुरू हुई, जिससे जानवरों और पौधों की आबादी और उनके वितरण की प्रकृति में बदलाव आया। इन पर्यावरणीय परिवर्तनों ने नवपाषाण संस्कृतियों को प्रभावित किया और नवपाषाण काल के लोगों के जीवन के तरीकों को कुछ हद तक निर्धारित किया। हालांकि, लोगों ने बदलती जलवायु परिस्थितियों के कारण अपने जीवन- पद्धति में तदनुसार परिवर्तन करने सम्बंधी महत्वपूर्ण सांस्कृतिक निर्णय लिए।

नवपाषाण संस्कृतियाँ ग्रामीण और कृषि संस्कृतियाँ थीं, तथा उन्हें धातु के बारे में ज्ञान नहीं था। वे पत्थर के परिष्कृत औजारों, पत्थर के औजारों और मिट्टी के बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। नवपाषाण काल में, मनुष्यों ने पौधों की खेती और घरेलू पशुओं का पालन करना शुरू कर दिया था । उन्होंने प्राकृतिक संसाधनों को अपनी ज़रूरत के हिसाब से प्रभावी रूप से संशोधित, नियंत्रित और प्रबंधित करना शुरू किया। इन उपायों से उनकी खाद्य सुरक्षा बढ़ने के साथ ही साथ, उनके जीवन जीने के तरीके भी बदल गए। चूंकि उन्होंने जानवरों

और पौधों को पालतू बनाया, इसलिए उन्हें जानवरों और पौधों की देखभाल करने के लिए स्थायी रूप से या विशेष समय के लिए एक जगह पर बसना पड़ा। उनकी आर्थिक जिम्मेदारियों में वृद्धि हुई तथा वे कुछ हद तक पौधों, चरागाहों, जानवरों और सिंचाई के गहन प्रबंधन कार्य से जुड़े। उन्होंने पौधों और जानवरों के चयनात्मक प्रजनन का अभ्यास किया और पर्यावरण का अच्छा ज्ञान और समझ विकसित की। हालांकि, नवपाषाण के आगमन का मतलब यह नहीं है कि लोगों ने जानवरों का शिकार करना और पौधों व कंद मूल आदि खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करना बंद कर दिया। उन्होंने जंगली जानवरों का शिकार करना जारी रखा तथा पौधों व कंद मूल आदि खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करते रहे। अपने आहार को पूरा करने के लिए मछली पकड़ने का कार्य भी करते थे, क्योंकि विभिन्न खाद्य संसाधनों की खपत उनकी भौतिक आवश्यकताओं और प्रभावी अस्तित्व के लिए आवश्यक थी।

4.3 नवपाषाण संस्कृति

'नवपाषाण' शब्द का प्रयोग पहली बार सर जॉन लुबॉक ने 1865 में प्रकाशित अपनी पुस्तक में किया था। वे इंग्लैंड के अवेबरी के पहले सामंत (जन्म 1834- मृत्यु 1913) थे। सांस्कृतिक ऐतिहासिक अनुक्रम में नवपाषाण युग की अवधारणा को जोड़कर, उन्होंने तीन युग प्रणाली (पाषाण युग, कांस्य युग और लौह युग) को परिष्कृत करने की मांग की, जिसे 1830 के दशक में सी. जे. थॉमसन द्वारा प्रस्तावित किया गया था।

'नव' शब्द का अर्थ है नया, और 'लिथिक' का अर्थ है पत्थर। पुरापाषाण (पुराने पाषाण युग) काल के विपरीत, इस अवधि में लोगों ने पॉलिश किए गए पत्थर के औजारों और कुल्हाड़ियों का उपयोग करना शुरू किया, जिन्हें अक्सर **सैल्ट** कहा जाता था। नव पाषाण काल के उपकरण पुरापाषाण काल (चित्रा 4.1) के बेडौल परतदार पत्थर के औजारों की तुलना में अधिक परिष्कृत दिखाई देते हैं।

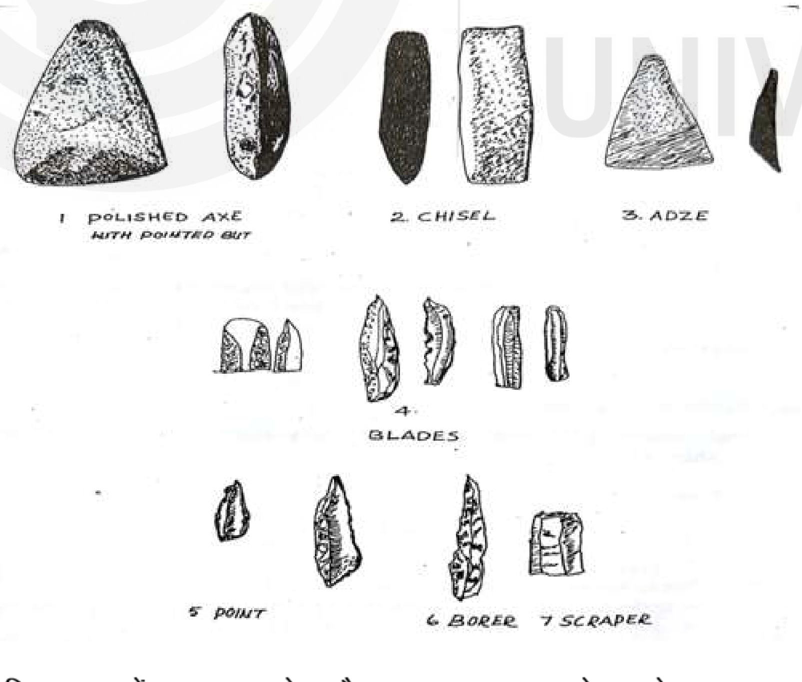

चित्र 4.1: दक्षिण भारत में नवपाषाण ब्लेड और पत्थर उपकरण उद्योग। स्रोत: EHI-02, खंड-3।

विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में शामिल होने के कारण उन्हें विविध प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता थी। आम तौर पर, पुरापाषाण उपकरण में खुरदरी या बारीक फलक वाली सतह होती है। कभी-कभी, पत्थरों को काट-छाँट कर तराशते समय इसकी प्राकृतिक

अवस्था को बनाए रखा गया था जिसे वे उपकरणों के उपयोग के दरम्यान हत्थे के रूप में इस्तेमाल करते थे। पुरापाषाण काल में औजारों को पॉलिश करने के ज्यादा प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। नवपाषाण काल में उन्होंने पत्थर के कुछ उपकरणों को पॉलिश किया। हालांकि, उन्होंने परत दार (Flaked) बगैर अपरिष्कृत किए औजारों का उपयोग जारी रखा। बाद के वर्षों में नव पाषाण की अवधारणा में बहुत बदलाव आया है। अब, यह प्रारम्भिक ग्रामीण और खेती वाले पशुपालन समुदायों को दर्शाता है जिन्होंने धातु का उपयोग नहीं किया था।

4.3.1 नवपाषाण क्रांति की अवधारणा

प्रारम्भिक अभिनूतन काल के कृषि-पशु पालक सांस्कृतिक विकास को 1941 में वी. गॉर्डन चाइल्ड ने नवपाषाण क्रांति का नाम दिया। नवपाषाण और ताम्र पाषाण युगीन संस्कृतियों को उनके अनुसार खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में माना जाता था। नवपाषाण क्रांति की अवधारणा कृषि की शुरुआत, पशु पालन और स्थायी जीवन को व्यवस्थित बनाने के तरीके को दर्शाता है। यह खाद्य सामग्री एकत्र (शिकार-संग्रह) करने वाली अर्थव्यवस्था से खाद्य उत्पादन (कृषि-पशुपालन) अर्थव्यवस्था में परिवर्तन का संकेत है। जीवन के नवपाषाण काल से संबंधित क्रांति का विचार मानव के सांस्कृतिक अनुकूलन का संकेत है। माइल्स बर्किट ने नवपाषाण संस्कृति की पहचान पॉलिश किए गए औजारों, जानवरों और पौधों को पालतू बनाने के रूप में की। इस प्रकार, 'नवपाषाण' अकेले नए उपकरणों (चित्र 4.2) के उपयोग को निरूपित नहीं करता है बल्कि सांस्कृतिक अनुकूलन के नए तरीके और जीवन के तरीके को भी दर्शाता है।

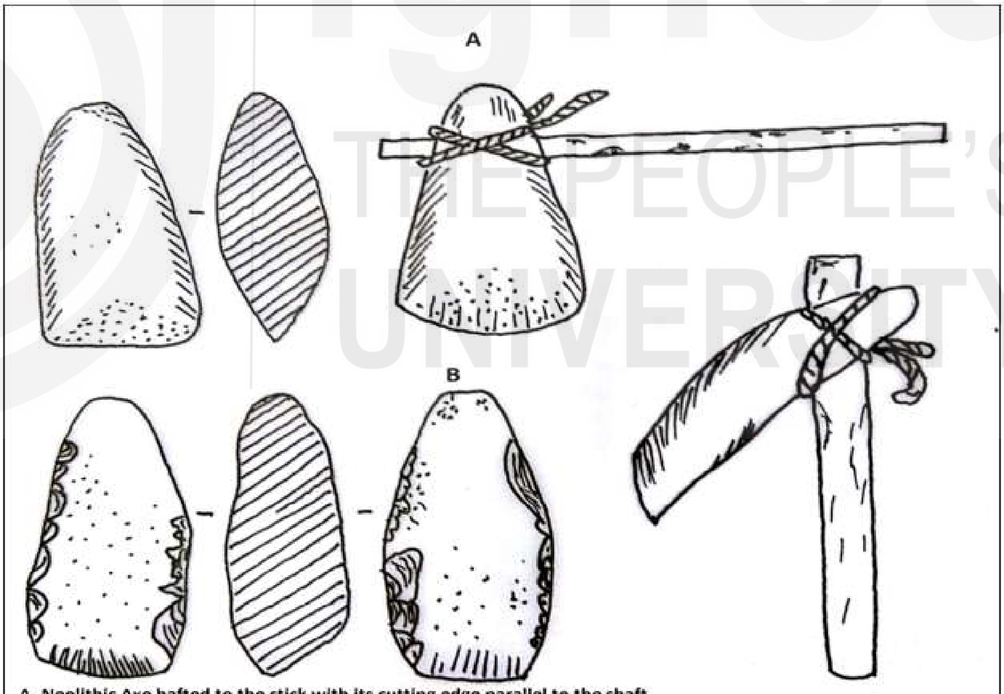

A- Neolithic Axe hafted to the stick with its cutting edge parallel to the shaft
B-Adze hafted in a way that its edge is placed perpendicular to the haft/handle

चित्र 4.2: नवपाषाण उपकरण। स्रोतः एम.ए.एन.-002, खंड-7।

पौधा रोपन और पशु पालन की शुरुआत होने पर बड़ी मात्रा में अनाज और पशुओं के भोजन का उत्पादन हुआ। अब इन उत्पादित भोजन का संग्रह करने हेतु मिट्टी के बर्तनों का निर्माण हुआ। चुंकि शैल आश्रय से दूर खुले इलाकों में रहना शुरू हो गया था अतः धूप बारिश व हिंसक जानवरों से बचाव के लिए घर बनाए गए। धीरे-धीरे बड़े गाँव विकसित हुए और स्थायी आवास बनाए गए। मवेशियों और भेड़ों की रक्षा के लिए बस्तियों की घेराबंदी की गई। इन गतिविधियों से धीरे-धीरे खाद्य भंडार में वृद्धि और शिल्प कला में विशेषज्ञता प्राप्त

हुई। खाद्य सुरक्षा के कारण अधिक लोग गांवों में बस सकते थे। अतः इस अवधि के सांस्कृतिक विकास को नवपाषाण क्रांति का नाम दिया गया।

अधिशेष खाद्य उत्पादन, प्रारंभिक शहरी संस्कृतियों के विकास के मुख्य कारकों में से एक था। इससे विभिन्न शिल्पों, शहरी संरचनाओं और शुरुआती राज्यों के विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ तथा कांस्य युग का आरम्भ हुआ।

4.3.2 शिकार-भोजन संग्रह से कृषि के संक्रमण के बारे में वाद-विवाद

खेती की शुरुआत कैसे हुई इस बारे में प्रस्तुत मतों में भिन्नता है। वी. गॉर्डन चाइल्ड के अनुसार जलवायु परिवर्तन के कारण उपजाऊ अर्धचन्द्राकार प्रान्त (दक्षिण-पश्चिम एशिया) में खेती की शुरुआत हुई। भू-आकृति विज्ञान और जलवायु कारकों के परिणामस्वरूप रेगिस्तान के विशाल भूखंड से अलग एक मरूद्यान का निर्माण हुआ। इन मरूद्यानों के आस पास अधिक से अधिक संख्या में मनुष्य अपने पशुओं के साथ रहने लगे तथा इस क्षेत्र में कृषि का विकास हुआ। इस तरह जानवर व मनुष्य के साथ-साथ रहने की वजह से मनुष्यों ने जानवरों को पालतु बनाना शुरू किया।

रॉबर्ट ब्रैडवुड ने जलवायु परिवर्तन की इस धारणा को चुनौती दी और खाद्य उत्पादन के धीमे और क्रमिक विकास से होने की बात कही है। जिन नाभिक क्षेत्रों में प्रचुर मात्रा में पशु और पौधों की प्रजातियां थीं, खेती की शुरुआत वहीं से हुई। पौधा रोपन और पशुपालन कार्य की ओर परिवर्तन हुआ क्योंकि संस्कृति उस स्तर को प्राप्त कर चुकी थी जहाँ से परिवर्तन अवश्यम्भावी था। इस प्रकार, कृषि में संक्रमण काफ़ी हद तक मानव प्रकृति और पर्यावरणीय परिस्थितियों में परिवर्तन जैसे कारकों के संयोजन के कारण था।

लुईस आर. बिनफोर्ड द्वारा कृषि की शुरुआत के लिए जनसंख्या गतिकी को मुख्य निर्धारक माना गया है। जनसंख्या में वृद्धि की वजह से कृषि कार्य अनिवार्य हो गया। 9000 बी.सी.ई. के आसपास पूरब में स्थित कुछ गतिरहित समूहों में जनसंख्या के दबाव ने प्राकृतिक संसाधनों का अधिक गहन दोहन किया, जिससे कृषि करना आवश्यक संभव हो गया।

कैंट फ्लैनरी का मानना था कि कृषि की शुरुआत एक घटना के बजाय एक लंबी प्रक्रिया थी। उनके अनुसार, शिकारी एवं संग्रहकर्ता का एक जगह से दूसरी जगह मौसमी प्रस्थान कुछ इस तरह से निर्धारित किया गया था कि वे अलग-अलग परिस्थितिकी क्षेत्रों में स्थित विभिन्न पौधों और जानवरों का भरपूर दोहन कर सकें। इस प्रकार, उनके पास कुछ पौधों और जानवरों के बजाय एक विस्तृत अर्थव्यवस्था तक पहुंच थी। मक्का और गेहूं जैसे कुछ पौधों के संकर (हाइब्रिड) किस्मों को विकसित किया गया और इसे वर्ष के विभिन्न समय में उगाया जाने लगा। इस प्रकार, शिकारी और संग्रह जीवन के पुराने तौर-तरीके (पैटर्न) को दीर्घकालिक पड़ाव और खाद्य उत्पादन के आधार पर कृषि निर्वाह के पैटर्न में बदलाव हुआ।

एक विचारधारा के अनुसार, संस्कृति को पर्यावरण के साथ अनुकूलन के रूप में देखा जाता है। हालांकि, संस्कृति को आंशिक रूप से पर्यावरण के साथ अनुकूलन के रूप में और आंशिक रूप से विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों के साथ मनुष्यों द्वारा किए गए सचेत निर्णय के परिणाम के रूप में देखा जाना चाहिए। ट्रेवर वॉटकिंस ने तर्क दिया कि अर्थव्यवस्था-आधारित परिवर्तन की पुरानी धारणाओं ने समाजों के 'संस्कृति और अनुभूति' आधारित परिवर्तन को रास्ता दिया। उन्होंने तर्क दिया कि शिखांत-पुरापाषाण युग के लोग पहली वृहत स्थायी समुदायों के रूप में व्यापक बस्तियों का निर्माण करने के लिए आए थे, जिनका भरन पोषण कृषि द्वारा केवल बाद में किया जाना था। यहाँ तर्क यह नहीं है कि

कृषि एक अचानक आविष्कार या घटना के रूप में विकसित हुई, बल्कि लोगों के एक बड़े समूह को खिलाने की आवश्यकता के रूप में एक क्रमिक प्रक्रिया के रूप में विकसित हुई। ट्रेवर वॉटकिंस ने सुझाव दिया कि लेवांत के शिखांत-पुरापाषाण युग में लोगों के छोटे-छोटे समूह धीरे-धीरे बड़े सह-निवासी समुदाय में परिवर्तित हो गए। कृषि और पशु पालन बाद में विकसित हुआ। उन्होंने सुझाव दिया कि सामाजिक और सांस्कृतिक कारक आर्थिक आवश्यकताओं की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण थे और लोगों ने बड़े समुदायों में रहने पर अधिक ज़ोर दिया जिससे खाद्य उत्पादन शुरू हुआ।

इस प्रकार, नवपाषाण क्रांति वास्तव में, एक लंबी प्रक्रिया थी, जो सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों और पर्यावरणीय स्थिति से प्रभावित थी। यह कोई साधारण एक बार का आविष्कार या एपिसोड नहीं था, जैसा कि कुछ लोगों ने कल्पना की थी।

4.3.3 वैश्विक संदर्भ में नवपाषाण काल

कृषि और पशु पालन की शुरुआत के रूप में नवपाषाण काल की पारंपरिक अवधारणा, स्थायी बस्तियों और समय के एक विशिष्ट बिंदु पर मिट्टी के पात्र की शुरुआत (या एक पैकेज के रूप में) के रूप में नहीं मानी जा सकती है। ये सांस्कृतिक लक्षण, कभी-कभी एक साथ और कभी-कभी अलग अलग, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में विकसित हुए। सभी नवपाषाण समुदाय पूरी तरह से गतिहीन नहीं थे और कुछ समुदाय अर्ध-गतिहीन थे और खानाबदोश जीवन जीते थे।

नव पाषाण युग के प्रारंभिक साक्ष्य उपजाऊ क्रीसेंट (अर्धचन्द्रीय क्षेत्र) जिसमें मिस्र की नील नदी की घाटी, इज़राइल, फिलिस्तीन, सीरिया और मेसोपोटामिया सम्मलित है; सिंधु क्षेत्र और भारतीय उपमहाद्वीप की गंगा घाटी; चीन और मेसो-अमेरिका तक पाए जाते हैं। लगभग 10,000 से 5,000 बी.सी.ई. तक दुनिया के कई हिस्सों में कृषि और पशुपालन संस्कृति का उदय हुआ, जिससे कई सांस्कृतिक विकास हुए। यद्यपि कृषि की आरम्भिक शुरुआत दुनिया के कई हिस्सों में हुई तथापि दक्षिण-पश्चिम एशिया में कृषि और पशु पालन के विकास के सबसे शुरुआती प्रमाण मिले हैं। इज़राइल, फिलिस्तीन और सीरिया (लेवांत), तुर्की और इराक के क्षेत्र में नौवीं सहस्राब्दी बी.सी.ई. के आसपास नवपाषाण गांवों का प्रारंभिक विकास पाया गया है।

4.3.4 नवपाषाण और समकालीन संस्कृतियां

नवपाषाण संस्कृति को मानव इतिहास में एक प्रमुख मोड़ के रूप में देखा जाता है। हालांकि, दुनिया के सभी क्षेत्रों ने नवपाषाण संस्कृति को नहीं देखा। नवपाषाण युग के लोगों के रहन-सहन के तरीके दक्षिण-पश्चिम एशिया, मिस्र, यूरोप, मेसो-अमेरिका, भारत के उत्तर-पश्चिमी भाग, भारत में गंगा घाटी और चीन जैसे क्षेत्रों में जल्दी दिखाई दिये हैं तथा अन्य क्षेत्रों में काफ़ी दिनों बाद दिखाई दिये। नवपाषाण संस्कृति पहली बार भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों में दिखाई दी। कश्मीर, दक्षिण भारत और पूर्वी भारत में यह बाद के चरण में दिखाई दी। भारत के कुछ क्षेत्रों ने नवपाषाण संस्कृतियों को बिल्कुल भी नहीं देखा और मध्य पाषाण संस्कृति के बाद लौह युग संस्कृति का शुभारम्भ हुआ, तमिलनाडु और केरल इसका उदाहरण हैं।

भारत की सभी नवपाषाण संस्कृतियों में सांस्कृतिक अनुकूलन एक ही स्तर का था। भारत की नवपाषाण संस्कृतियां, हड़प्पा, ताम्र पाषाण युग और लघु पाषाण का उपयोग करने वाले शिकारी-संग्रह संस्कृति के साथ समकालीन थीं। इस प्रकार, यह ध्यान देने योग्य बात है कि भारत की नवपाषाण संस्कृतियां अलग-थलग सांस्कृतिक इकाइयाँ नहीं थीं। वास्तव में, तांबे

के उपयोग को छोड़कर, ताम्र पाषाण युग की संस्कृतियों और नवपाषाण संस्कृतियों के बीच बहुत अंतर नहीं देखा गया है।

बोध प्रश्न 1

1) नवपाषाण क्रांति की अवधारणा पर संक्षिप्त चर्चा करें।

....

....

....

....

....

2) शिकार-संग्रह प्रणाली से कृषि तक संक्रमण के बारे में परिचर्चा की मुख्य विशेषताओं पर चर्चा करें।

....

....

....

....

....

4.4 भारत की नवपाषाण संस्कृतियां

नवपाषाण संस्कृतियां पाषाण युग के अंत को चिह्नित करती हैं। भारत का नवपाषाण काल एक महत्वपूर्ण चरण है। 1842 में भारत में कर्नाटक के रायचूर जिले में ले मेसुरी द्वारा और बाद में 1867 में ऊपरी असम की ब्रह्मपुत्र घाटी में जॉन लबॉक द्वारा एक नवपाषाण काल की कुल्हाणी (celt) का पता चला। व्यापक खोज और उत्खनन से भारत की नवपाषाण संस्कृतियों के बारे में काफ़ी मात्रा में सामग्री प्राप्त हुई है। भारतीय नवपाषाण के बारे में एक बात ध्यान देने योग्य है कि भारत में नवपाषाण संस्कृतियाँ एक ही समय में हर जगह विकसित नहीं हुईं, न ही एक साथ समाप्त हुईं। क्षेत्रीय भिन्नताएँ भी थीं। उदाहरण के लिए, उत्तर-पूर्व में नवपाषाण युग के उपकरणों/संयंत्रों के बावजूद खेती का कोई सबूत नहीं मिला है। कश्मीर घाटी में नवपाषाणकालीन संस्कृतियाँ पूर्ववर्ती मध्य पाषाण संस्कृतियों से विकसित नहीं प्रतीत होती। उपजाए गए फसलों के संदर्भ में, बलूचिस्तान के मेहरगढ़ में गेहूं और जौ प्रमुख थे, लेकिन प्रयागराज के आसपास के मध्य क्षेत्र में चावल महत्वपूर्ण था। दक्षिण भारतीय नवपाषाण इस अर्थ में अद्वितीय है कि इसमें बाजरा की खेती के साक्ष्य के साथ राख के टीले भी मिले हैं। इस प्रकार, इन क्षेत्रीय नवपाषाण परंपराओं में से प्रत्येक को स्थानीय व पारिस्थितिक परिस्थितियों द्वारा अनुकूलित पाया गया है और इसे अलग से अध्ययन करने की आवश्यकता है। तथापि, मोटे तौर पर हम यह कह सकते हैं कि भारत का नवपाषाण काल स्थिर/अर्ध-स्थिर ग्रामीण संस्कृति का मिला जुला स्वरूप था।

अब हम नवपाषाण स्थलों के समूहों पर चर्चा करते हैं जो भारत के विभिन्न भागों में पाए जाते हैं। भारतीय उपमहाद्वीप या दक्षिण एशिया के नवपाषाण स्थलों को विभिन्न क्षेत्रीय सांस्कृतिक समूहों में विभाजित किया गया है। ये हैं:

1) उत्तर-पश्चिमी भाग – अफ़ग़ानिस्तान और पाकिस्तान के क्षेत्र।
2) उत्तरी क्षेत्र – कश्मीर का क्षेत्र।
3) विंध्य की पहाड़ियाँ और गंगा घाटी– प्रयागराज, मिर्जापुर और बेलन नदी घाटी का विंध्य क्षेत्र।
4) मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र – बिहार के उत्तरी भाग का क्षेत्र।
5) मध्य पूर्वी क्षेत्र – ओडिशा और बंगाल क्षेत्र के साथ छोटा नागपुर क्षेत्र को छोड़कर।
6) उत्तर-पूर्वी क्षेत्र – असम और उप-हिमालयी क्षेत्र।
7) दक्षिणी क्षेत्र – प्रायद्वीपीय भारत, मुख्यतः आंध्र, कर्नाटक और तमिलनाडु के कुछ हिस्से।

हम इन क्षेत्रीय परंपराओं की मुख्य विशेषताओं को अलग-अलग विस्तार से समझेंगे ।

4.4.1 उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति अब पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान में हैं। इस क्षेत्र में गेहूं और जौ की खेती और पशुपालन के शुरुआत के साक्ष्य मिले हैं। यह दुनिया के शुरुआती क्षेत्रों में से एक है जहाँ पशुपालन एवं पौधा रोपन आदि के संयुक्त साक्ष्य मिले हैं। मध्य एशिया की परिधि क्षेत्र में ब्रैड व्हीट (एक प्रकार का गेंहू) की खेती के प्रमाण मिले हैं। गेहूं की पैतृक प्रजातियों में से एक, *एजीलॉप ताउशी* के इस क्षेत्र में प्राकृतिक रूप से प्राप्त होने के बारे में भी पता चलता है। इस प्रकार, इस क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से खेती की शुरुआत हुई।

उत्तरी अफ़ग़ानिस्तान की गुफाओं में मध्यकालीन शिकारी-संग्रहकर्ता द्वारा जंगली भेड़, बकरी आदि के शिकार के साक्ष्य मिले हैं। गेहूं की खेती मध्य एशिया और इसके आसपास के क्षेत्रों में शुरू हुई। कच्छी के मैदानी भाग शुष्क पहाड़ों और सिंधु के मैदानों के बीच स्थित हैं। बाढ़ से जमा हुए मिट्टी वाले इस क्षेत्र की छोटी घाटियाँ खेती और पशुपालन के लिए आदर्श थीं। इस क्षेत्र के महत्त्वपूर्ण नवपाषाण स्थल कच्छी मैदानों में मेहरगढ़, क्वेटा घाटी में किली गुल मुहम्मद, लोरलाई घाटी में राणा घुंडई और सुरब घाटी में अंजीरा हैं। ये सभी नवपाषाण स्थल पाकिस्तान में हैं। अन्य महत्वपूर्ण स्थल हैं – गुनलन, रहमान ढेरी, तारकाई किला और सराय खोला।

मेहरगढ़ः एक अध्ययन

मेहरगढ़, बोलन नदी के तट पर, बलूचिस्तान में क्वेटा से लगभग 150 किमी दूर, कच्छी के मैदानों में स्थित एक महत्वपूर्ण स्थल है। इस स्थल में 200 हेक्टेयर का क्षेत्र शामिल है। स्थल ने पूर्व-मृदभांड नवपाषाण काल से हड़प्पा संस्कृति तक के प्रमाण दिये है।

मेहरगढ़ में नवपाषाण संस्कृति का पहला सांस्कृतिक काल 7000 से 5500 बी.सी.ई. का है। यह मिट्टी के बर्तन के उपयोग के पहले की संस्कृति है। अर्द्ध घुमंतू पशु पालक समूह इस जगह पर बसने लगे। ये लोग पॉलिश किए गए पत्थर की कुल्हाड़ियों, चक्की, विशेष आकार के छोटे-छोटे पत्थर और हड्डी के औजारों का इस्तेमाल करते थे। वे मिट्टी के बर्तनों का उपयोग नहीं करते थे, लेकिन जौ, गेहूं की खेती और भेड़, बकरी और अन्य मवेशियों का पालन करते थे। इस स्थल पर पाए जाने वाले बेर, खजूर और जुजुबे के बीज आदि, निवासियों की खाद्य वस्तुओं के इकट्ठा करने की

प्रवृति को दर्शाता हैं। बारहसिंगा, हिरण, मृग आदि की हड्डियों से संकेत मिलता है कि वे लोग जंगली जानवरों का भी शिकार करते थे।

उस समय के लोग मिट्टी से अपने घरों को बनाते थे तथा मृतकों को घरों के अंदर ही दफन करते थे। शवों के पास बकरी की लाशें और आभूषण भी रखे मिले हैं। घर का आकार 2x1.8 मीटर का होता था। घरों में पीसने के पत्थर और पथर के धारदार ब्लेड पाए गए हैं। ब्लेड्स से अस्फाल्ट (बिटूमेन) के होने का साक्ष्य मिलता है जिससे पता चलता है कि उस समय हथियारों में पत्थर के हत्थे का उपयोग होता था। स्थल से हस्तनिर्मित स्त्री की मूर्तियों को बरामद किया गया है। घर भंडारण कक्ष की तरह दिखाई देते हैं और शायद उनका उपयोग अनाज भंडारण के लिए किया जाता था। उस समय लोगों द्वारा शंख, चूना पत्थर, फ़िरोज़ा मोती, लाजवर्द और बलुआ पत्थर के गहने का इस्तेमाल करने के सबूत मिले हैं। ईरान के निशापुर खानों से फ़िरोज़ा, अफ़गानिस्तान के बदकशान से लाजवर्द और तटीय क्षेत्रों से शंख मिलने से ज्ञात होता है कि मेहरगढ़ के नवपाषाण काल के लोगों का सम्पर्क दूर तक के लोगों से था।

मेहरगढ़ की अवधि II, 6500 बी.सी.ई. से 4500 बी.सी.ई., तथा अवधि III, 4800 बी.सी.ई. से 3500 बी.सी.ई. तक मानी जाती है। 5000 बी.सी.ई. अवधि II में, कपास और अंगूर की खेती के सबूत देखे गए। इस काल में मिट्टी के बर्तनों के प्रयोग के प्रमाण हैं। टेराकोटा (पकी मिट्टी) मूर्तियों के साथ चमकदार प्रकाचित मिट्टी के मनके पाए गए हैं। महिलाओं के बीच गहनों के उपयोग सम्बंधी प्रचलन के सबूत भी मिले हैं। लाजवर्द के उपयोग से लंबी दूरी तक के व्यापार के साक्ष्य का पता चलता है। बाद में घरों के आकार में वृद्धि तथा हाथी दांत पर किए कारीगरी के काम के भी सबूत मिले हैं। इस अवधि में हँसिया का प्रयोग शुरू हो गया था। मेहरगढ़ की अवधि III में चाक से मिट्टी के बर्तनों को बनाने तथा उस पर मानव और पुष्प डिजाइनों को चित्रित किए जाने के सबूत मिले हैं। इस अवधि में कब्रगाहों की अधिक संख्या होना, जनसंख्या में वृद्धि का संकेत है। पीरियड III में भी तांबे पर काम के साक्ष्य पाए गए हैं। सिंधु सभ्यता के विकसित व समृद्ध होने के पश्चात गाँव के परित्याग करने सम्बंधी सबूत भी प्राप्त हुए हैं ।

मेहरगढ़ का महत्व

मेहरगढ की अवधि I से III में घुमंतु शिकारी-संग्रहकर्ता जीवन से लेकर पशुपालन और कृषि तक के संक्रमण के शुरुआती प्रमाण मिले हैं। लगता है कि जौ सबसे महत्वपूर्ण फसल थी। गौरतलब है कि जौ की जंगली, संक्रमणकालीन और खेती योग्य किस्में पाई गई हैं। बलूचिस्तान के उत्तरी क्षेत्र में जौ प्राकृतिक रूप से उगते थे तथा मेहरगढ़ के जौ के उत्पादन का केंद्र होने सम्बंधी साक्ष्य मिला है। इस क्षेत्र में गेहूँ उपजाने के सबूत मिले हैं। हालांकि इस क्षेत्र में गेहूं के प्राकृतिक रूप से उगने का सबूत नहीं है तथापि मेहरगढ़ के लोगों द्वारा गेहूं की खेती करने के सबूत मिले हैं। स्थल पर पशु पालन के और संक्रमण के लिए बहुत सारे सबूत हैं। अवधि के निचले स्तर में जंगली जानवरों के अवशेष मिले हैं। स्तर I काल में मवेशियों और भेड़ की हड्डियों के घटते आकार से संकेत मिलता है कि पशुपालन पर ज़ोर दिया जाने लगा था। अवधि I के अंत तक, जंगली जानवरों की हड्डियां कम हो गईं, जबकि पालतू मवेशियों, भेड़ और बकरी की हड्डियों में वृद्धि हुई। स्तर III की अवधि में, भेड़, बकरी की हड्डियां आदि की संख्या में वृद्धि पायी गयी।

मेहरगढ़ का स्थल महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें मवेशियों, भेड़, बकरी आदि पशुओं को पाला जाने लगा तथा गेहूं और जौ की खेती का शुभारम्भ हुआ जो दुनिया में अपनी तरह का पहला सबूत है।

किली गुल मुहम्मद

किली गुल मुहम्मद का नवपाषाण स्थल पाकिस्तान की क्वेटा घाटी में है। इस स्थल से तीन सांस्कृतिक काल का पता चला है। इस स्थल की नवपाषाण बसावट 5500 बी.सी.ई. से 4500 बी.सी.ई. तक की हैं जो मेहरगढ़ के बाद के माने जाते हैं। यहाँ के लोगों द्वारा छप्पर वाले और मिट्टी से घर बनाने के सबूत मिले हैं। उन्होंने गाय, भेड़ और बकरी को पालतू बनाया। मेहरगढ़ के समान ही चित्रित डिजाइनों के साथ टोकरी चिह्नित मिट्टी के बर्तनों, लाल मिट्टी से बने बर्तनों को काले रंग से रंगने आदि काम के सबूत चरण II और III में पाए जाते हैं। इस स्थल पर खानाबदोश पशुपालकों के होने के भी सबूत मिले हैं। इस स्थल से सूक्ष्म पाषाण उपकरण भी बरामद किए गए हैं।

4.4.2 उत्तरी क्षेत्र (कश्मीर) की नवपाषाण संस्कृति

उत्तरी नवपाषाण संस्कृति के स्थल कश्मीर में पाए जाते हैं। कश्मीर क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति हड़प्पा सभ्यता के समकालीन थी। हालिया शोध ने इस क्षेत्र में नवपाषाण संस्कृति की शुरुआत को चौथी सहस्राब्दि के उत्तरार्द्ध के आसपास रखा है। बुर्ज़ाहोम, गुफक्राल और कानिसपुर में उत्खनन से नवपाषाण संस्कृति से संबंधित महत्वपूर्ण सामग्री का पता चला। बुर्जाहोम और गुफक्राल ने महापाषाण युग और प्रारंभिक ऐतिहासिक चरणों के बारे में भी खुलासा किया है।

बुर्ज़ाहोम

बुर्ज़ाहोम इस संस्कृति का एक महत्वपूर्ण स्थल था। इस स्थल पर दो सांस्कृतिक अवधियों की पहचान की गई है। नवपाषाण काल में, लोग कश्मीर क्षेत्र के अत्यधिक ठंडे मौसम से बचने के लिए गड्ढे वाले घरों (भूमिगत आवास, लगभग 4 मीटर गहराई) में रहते थे। गर्त घर आकार में अंडाकर थे, और वे नीचे की तरफ़ चौड़ें थे और ऊपर की तरफ़ संकरे थे। गडढे वाले घरों के चारों ओर एक छत संरचना के निर्माण के लिए उपयोग किए जाने वाले स्तंभ छेद पाए गए हैं। घरों के भीतर सीढ़ी से जाया जाता था। उन्होंने मोटे हस्तनिर्मित मिट्टी के बर्तनों को बनाना शुरू किया। निवास स्थान के पास भंडारन के लिए गड्ढे पाए गए। लोग पत्थर की कुल्हाड़ियों, छेनी, फरसा, मूसल, कुदाली आदि जैसे उपकरणों का उपयोग किया करते थे। उन्होंने जानवरों की खाल पर काम करने के लिए खुरचनी का इस्तेमाल किया। ठंड से बचने के लिए जानवरों के खाल को सुए से सिलके कपड़ों के रूप में .उपयोग किया जाता था। हड्डियों से बनी बर्छी, सुई और तीर का उपयोग किया जाता था। पत्थर पर शिकार का दृश्य तथा सूर्य और कुत्ते का चित्रण भी पाया गया है। ये लोग शिकार करने, मछली पकड़ने और सीमित कृषि कार्य करते थे। यहाँ अनाज भण्डारण के साक्ष्य भी मिले हैं। बुर्ज़ाहोम में एक छिद्रित अनाज काटने का उपकरण भी मिला है। काल II में गोमेद और इंद्रगोप के मनके तथा कोटडीजी चरण के बर्तन में एक सींग वाले देवता को एक महत्वपूर्ण खोज के रूप में दिखाया गया है। इस स्थल के कब्रगाह से जंगली कुत्ते की हड्डी और बारहसिंहे के सींग भी प्राप्त हुए हैं। इस क्षेत्र से गेहूं (*ट्रिटिकम एसपी*) ।), जौ (*होर्डियम वल्गारे*), आम मटर (*पाईसम अरविन्से एल*) और दाल (*लेंस क्युलारिस*) आदि बरामद किए गए हैं। पालतू जानवरों में भेड़, बकरी, सुअर, कुत्ता आदि शामिल हैं। लाल हिरण, कश्मीरी हिरण, इबेक्स, भालू और भेड़िया की जंगली जानवरों की हड्डियाँ मिली हैं जिससे पता चलता है कि वे लोग निर्वाह हेतु इन जंगली जानवरों का शिकार भी करते थे।

गुफक्राल के स्थल में तीन सांस्कृतिक चरणों के प्रमाण हैं। 3000 बी.सी.ई के आसपास इस स्थल पर लोगों ने बसना शुरू कर दिया था और उनके गड्ढों में रहने के प्रमाण मिले हैं। भेड़, बकरी, हिरण, बारहसिंगा, भेड़िया और भालू की हड्डियाँ बरामद हुयी हैं जिससे पता चलता है कि लोग पशु-पालन और अपने निर्वाह के लिए शिकार पर निर्भर थे। पॉलिश पत्थर के उपकरण, चक्की, सींग के उपकरण और शैलखटी मनकें से उनकी भौतिक संस्कृति के बारे में जानकारी मिलती है। यह स्थल 1300 बी.सी.ई. का माना गया है। माना जाता है कि कश्मीर की नवपाषाण संस्कृति का पूर्व-एशियाई नवपाषाण संस्कृति के यांग शाओ चरण के साथ संबंध था। कश्मीर घाटी में मिले छिद्रण वाले स्टोन नाइफ-हार्वेस्टर की, उत्तर और मध्य चीन के यांग शाओ और लुंग शान समूह तथा जापान व कोरिया के जोमन आदि के साथ समानताएं हैं। कश्मीर नवपाषाण में कुछ विशिष्ट विशेषताएं हैं जैसे कि गड्ढे में रहना, फसल काटने के औजारों का उपयोग, जानवरों के सिंग व हड्डी के उपकरण, कुत्ते के दफनाने और शवों पर लाल गेरू के उपयोग आदि।

4.4.3 विंध्य पहाड़ियों की नवपाषाण संस्कृति, बेलन व गंगा नदी की घाटियाँ

भारत में सबसे पहले नवपाषाण की बसावट बेलन नदी घाटी में मानी जाती है। यह नदी विंध्य एवं कैमूर पर्वतों के उत्तरी भागों में बहती थी। यह नदी टोंस नदी की एक सहायक नदी है जो प्रयागराज (उ.प्र) के पास गंगा में मिलती है। चूंकि यह मौनसून क्षेत्र में आता है इसलिए यहाँ का वातावरण समृद्ध व हरा भरा है। इसमें कई जंगली जानवर और जंगली चावल की प्रजातियां पायी जाती थीं। भोजन-संग्रह से खाद्य उत्पादन तक का संक्रमण के सबूत इस क्षेत्र में पाए गए। चोपनी-मांडो, कोल्डिहवा, लेहुरादेव और गंगा घाटी के महागरा इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण उत्खनन स्थल हैं। इन स्थलों से घास व जंगली पत्तों व मिट्टी से पुते घर, स्तंभ छेद, सूक्ष्म पाषाण से निर्मित उपकरण, चक्की, मूसल और हाथ से बने मिट्टी के पात्र आदि के प्रमाण मिले हैं। मुख्य सामग्री के रूप में डोरीदार या विकसित डोरीदार पात्र आते हैं जिसमें कटोरे और भंडारन जार शामिल हैं। लोग खेती और पशुपालन के काम में लगे थे। मवेशी, भेड़, बकरी, हिरण, कछुए और मछली भी बरामद हुए हैं। महागरा में घरेलू चावल के उपयोग के प्रमाण मिले हैं। यह जले हुए अनाज के रूप में मिले हैं और मृदभांडों में चावल की भूसी सन्निहित मिली है।

मध्य भारत के नवपाषाण स्थलों में चावल की खेती के साक्ष्य विवादों में घिरे हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि कोल्डिहवा का यह साक्ष्य कालानुक्रम के संदर्भ में चीन के समान है जबकि दूसरों का मानना है कि इन तारीखों की फिर से जांच करने की आवश्यकता है। एक संभावना के रूप में सुझाव दिया गया है कि चावल की खेती दक्षिण चीन से मध्य भारत में आयी हो सकती है। हालाँकि, कुछ लोगों का तर्क है कि मध्य भारत चावल की खेती का एक स्वतंत्र केंद्र था।

4.4.4 मध्य-पूर्वी गंगा घाटी क्षेत्र की नवपाषाण संस्कृति

चिरंद (सारन जिले में घाघरा नदी के तट पर), चेचर, सेनुवर (ससाराम के पास) और तारादीप में लगभग 2000 बी.सी.ई. से लोगों के निवास करने के सबूत मिले हैं। सेनुवर में खेती कर उपजाए गए चावल, जौ, मटर (*पाईसम सटाईवम*), मसूर और बाजरा के उत्पादन के सबूत मिले हैं। चिरंद के स्थल से मिट्टी के फर्श, मिट्टी के बर्तनों, सूक्ष्म पाषाण से निर्मित वस्तुएँ, पॉलिश की गयी पत्थर की कुल्हाड़ियों और पक्की मिट्टी से निर्मित मानव मूर्तियों के

सबूत प्राप्त हुए हैं। इन स्थलों पर हड्डियों से निर्मित उपकरण भी पाए गए हैं। चिरंद में लोग मिट्टी से बने दीवारों व घास व जंगली पत्तों से निर्मित छत वाले गोलाकार और अर्धवृत्ताकार घरों में रहते थे तथा स्तंभ छेदे के भी सबूत मिले हैं। इस स्थल से चावल, गेहूं, जौ, मूंग और मसूर के पौधों के अवशेष बरामद किए गए हैं। शायद दो-दो फसल उगाने की प्रथा मौजूद थी। इस क्षेत्र में पक्की मिट्टी से बने कूबड़ वाले बैल, पक्षियों, और सांप की मूर्तियों तथा चूड़ियाँ और मनके व पत्थर फेंकने के हथियार के प्रयोग का पता चलता है।

इस क्षेत्र के नवपाषाण स्थलों सोहगौरा, इमलीडीह खुर्द, चिरंद, चेचर और सेनुवार से प्राप्त वस्तुएँ ताम्र पाषाण युग के संक्रमण के प्रमाण भी हैं। ऐसा लगता है कि इस क्षेत्र में तीसरी सहस्राब्दी बी.सी.ई. के दूसरे अद्धांश में तांबे की शुरुआत हुई थी।

4.4.5 मध्य-पूर्वी भारत की नवपाषाण संस्कृति

नवपाषाण स्थल पश्चिम बंगाल और ओडिशा के क्षेत्र में कई स्थानों पर पाए जाते हैं। बीरभनपुर इस क्षेत्र का एक महत्वपूर्ण नवपाषाण स्थल है। पूर्वी भारतीय नवपाषाण स्थलों में कंधों वाली कुल्हाड़ियों, नुकीले बट वाली कुल्हाड़ियां और छेनी के प्रमाण हैं। कुचाई, गोलबाइसन और शंकरजंग आदि इस क्षेत्र के कुछ महत्वपूर्ण नवपाषाण स्थल हैं। ये संस्कृतियां पूर्व और दक्षिण-पूर्व एशिया के नवपाषाण परिसरों के समान दिखती हैं। इस क्षेत्र से गदा, लोढा, मूसल, मोटे लाल बर्तन, डोरीदार मिट्टी के बर्तन, फर्श, स्तंभ छेद और हड्डियाँ मिली हैं। पांडु राजार ढिबी क्षेत्र में नवपाषाण संस्कृति मध्य पाषाण संस्कृति से विकसित हुयी हैं।

4.4.6 पूर्वोत्तर भारत की नवपाषाण संस्कृति

असम और उत्तरी चच्छर की पहाड़ियाँ, तथा गारो और नागा पहाड़ियाँ उच्च वर्षा वाले क्षेत्र हैं। मरकडोला, दाओजली हडिंग और सरुटारू असम क्षेत्र के नवपाषाण स्थल हैं। यहाँ आमतौर पर कंधे वाली कुल्हाड़िया, गोलाकार कुल्हाड़ियाँ और डोरी या बेलचा मुद्रित मिट्टी के बर्तन प्राप्त हुए हैं। उत्तर-पूर्वी भारत में, नवपाषाण संस्कृति थोड़ी बाद की अवधि की है। इस क्षेत्र में झूम खेती, रतालू और यम (एक प्रकार का तना रहित फल) की खेती, मृतकों के लिए पत्थर और लकड़ी के स्मारक बनाने और ऑस्ट्रो-एशियाई भाषाओं की उपस्थिति के प्रमाण हैं। यह क्षेत्र दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ सांस्कृतिक समानता को दर्शाता है।

4.4.7 दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति

दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृतियाँ मुख्यतः आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु के उत्तर-पश्चिमी भाग में पाई जाती हैं। कूपगल, बुदिहल, कोडेकल, कुड़ातिनी, संगनकल्लू, टी. नरसीपुर, और ब्रह्मगिरि दक्षिण भारत के नवपाषाण स्थल हैं। तमिलनाडु में पइय्यमपल्ली के स्थल से नवपाषाण संस्कृति के प्रमाण मिले हैं। दक्षिण भारत के नवपाषाण समूह के रूप में 200 से अधिक नवपाषाण स्थलों की पहचान की गई है। ये स्थल पानी के स्रोतों के साथ ग्रेनाइट पहाड़ियों के पास पाए जाते हैं। ये गोदावरी, कृष्णा, पेन्नेरु, तुंगभद्रा और कावेरी नदियों की घाटियों में पाए जाते हैं। कर्नाटक में संगनकल्लू, कोडेकल, बुदिहल, टेकलकोटा, ब्रह्मगिरी, मस्की, टी. नरसीपुर, पिकलिहल, वटकल, हैमीज, हलूर, उत्नूर, पल्लवॉय, नागार्जुनकोंडा, रामपुरम और वीरपुरम तथा तमिलनाडु में पय्यमपल्ली उल्लेखनीय स्थल हैं।

कुछ शुरुआती नवपाषाण स्थलों में राख के टीले मिले हैं। गाय के गोबर को समय-समय पर जलाया जाता था। हो सकता है कि इन स्थलों पर पशुपालकों का आवास हो और गाय के गोबर को समय-समय पर विभिन्न कारणों से जलाया जाता हो। आंध्र प्रदेश के उत्नूर

और पल्लवॉय; कर्नाटक में कोडेकल, कूपगल और बुदिहल में राख के टीले मिले हैं। गोबर को बार-बार जलाया जाता था जिससे यह काचित (काच के समान) हो जाता था और ज्वालामुखी की राख की तरह दिखता है। नरम राख और विघटित गोबर की परतें भी देखी गयी हैं। राख के टीले के आसपास घरों और कब्रगाहों के प्रमाण मिले हैं। वे लोग मृत लोगों को घरों के भीतर दफन कर दिया करते थे।

राख के टीले

दक्षिण भारत की नवपाषाण संस्कृति भारत की क्षेत्रीय नवपाषाण परंपराओं में सबसे व्यापक है। इसमें कर्नाटक, आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु शामिल हैं। यद्यपि राख के टीले की कुछ विशेषताएँ हैं तथापि यह दक्षिण भारतीय नवपाषाण स्थलों की एक समस्या भी है। उत्तरी कर्नाटक के बेल्लारी, रायचूर, बीजापुर, गुलबर्गा और बेलगाम तथा आंध्र प्रदेश के रायलसीमा क्षेत्र के अनंतपुर, करनूल, महबूबनगर जिलों को मिलाकर दक्षिणी डेक्कन में सौ से अधिक ऐसे स्थलों की खोज की गई है।

प्रोफेसर के. पदैय्या द्वारा उत्तरी कर्नाटक के बुदिहाल (Budihal) के राख के टीले के स्थल पर की गई विस्तृत जांच से पता चला है कि राख के टीले नियमित, नवपाषाण ग्रामीण बस्तियों में पाए जाते थे। यह अर्ध-शुष्क जलवायु परिस्थितियों व पहाड़ी इलाकों में **खाद्य उत्पादन** करने वाले समुदायों के अनुकूलन/आत्मसात (adaptation) करने का एक उदाहरण है, जो पौधों की खेती के लिए उपयुक्त नहीं थे। राख के टीलों के संबंध में कई व्याख्याएं प्रस्तुत की गई हैं। शुरुआत में लोगों ने स्थानीय किंवदंतियों को अपनी व्याख्याओं का आधार बनाया जिसके तहत वे इन राख के टीलों को *महाभारत* के राक्षसों के दाह संस्कार के साक्ष्य के रूप में मानते थे। दूसरे दृष्टिकोण ने उन्हें कंकर-पत्थर या ज्वालामुखीय राख के भूवैज्ञानिक जमावड़े के रूप में माना। मध्ययुगीन काल में एक अन्य विचार के तहत विजयनगर साम्राज्य और दिल्ली सल्तनत के बीच युद्धों में अपने पति को खो देने वाली महिलाओं द्वारा किए गए सामूहिक सती के भौतिक अवशेषों के रूप में बताया गया है। एक अन्य विचार के तहत इसे लोहे और सोने को गलाने, ईंट बनाने, मिट्टी के बर्तन बनाने आदि जैसी औद्योगिक गतिविधियों से संबंधित जमी राख के रूप में स्वीकार किया जाता है। रॉबर्ट ब्रूस फुट ने बस्तियों में इन राख के टीलों को नवपाषाण काल से संबंधित पाया और इसे नवपाषाण काल की गतिविधि के रूप में उद्धृत किया। 1960 के दशक में महबूबनगर जिले के उत्नूर (Utnoor) में एफ़. आर. ऑल्चिन द्वारा खुदाई ने फुट के निष्कर्षों की पुष्टि की। हालाँकि, उनका मानना था कि वे गाय के रहने के स्थल हैं, और वह उन्हें मानव के रहने के स्थलों से अलग मानते हैं। उनका निष्कर्ष मवेशियों के खुर के छापों और उत्नूर में पाए गए पशु बाड़े की तैयारी के साक्ष्य पर आधारित है। उन्होंने तर्क दिया कि राख के टीले कई चरणों में बने थे। प्रत्येक के निर्माण के दौरान सतह को समतल किया जाता था, लकड़ी के बाड़े बनाए जाते थे, मवेशियों को दाना डाला जाता था तथा गाय के गोबर को एकत्र कर जला दिया जाता था। फुट द्वारा प्रस्तुत दावे से अलग, गोबर को गलती से नहीं बल्कि जानबूझकर जलाया जाता था। यह नवपाषाण काल के अग्नि के उपयोग का हिस्सा था, जो मवेशियों की प्रजनन क्षमता को बढ़ावा देने के लिए किया जाता था।

बुदिहाल के स्थल पर व्यापक क्षैतिज उत्खनन के आधार पर प्रोफेसर के. पदैय्या ने ऑल्चिन द्वारा राख के टीलों वाले स्थलों को लोगों के स्थायी निवास स्थल के रूप में व्यक्त किए गए विचारों से असहमति जतायी है। उन्होंने महसूस किया कि वे वास्तव में पशुपालन वाले क्षेत्र थे और राख के टीलों को सांस्कृतिक महत्व रखने वाली पूर्ण

बस्तियों के रूप में माना जाना चाहिए। उनकी जांच से पता चला कि बुदिहाल जैसे राख के टीले इस क्षेत्र के छोटे स्थलों की तुलना में बड़े और विशिष्ट थे। बुदिहाल संभवतः वर्तमान के मवेशियों के मेलों के समान एक मंडलीय केंद्र के रूप में कार्य कर रहा था। यहां महत्वपूर्ण सामाजिक-सांस्कृतिक लेनदेन होते रहे होंगे। स्थल पर पाई गई व्यापक चमकदार कर्मशाला के अवशेषों से पता चलता है कि उस समय बिल्लौर की बनी चमकदार वस्तुएँ, पत्थर के धारदार औज़ार आदि का आदान-प्रदान या कारोबार किया जाता था।

स्रोतः के. पदैय्या, 2001

दक्षिण भारत के नवपाषाणकालीन लोगों की कृषि आधारित ग्रामीण अर्थव्यवस्था थी। वे मवेशियों (*Bos indicus*), भैंस (*Bubalus bubalis*), भेड़ (*Ovis aries*), बकरी (*Capra hircusaegagrus*), सुअर (*Sus scrofacristatus*), कुत्ते (*Canis familiaris*) और उल्लू (*Gallus sp.*) को पालते थे। मवेशी उनकी अर्थव्यवस्था का मुख्य स्रोत थे। पक्की मिट्टी से बनी मवेशियों की मूर्तियाँ भी मिली हैं।

नवपाषाण काल के लोग मुख्य रूप से बाजरा, दालें और फलियां उगाते थे। बाजरा (*Eleusine coracana*), कोदो बाजरा (*Paspalum scrobiculatum*), काबुली चना (*Dolichos biflorus*), हरा चना (*Vigna radiata*), काला चना (*Phaseolus mungo*) और जलकुंभी बीन (*Dolichos lablab*) की खेती के प्रमाण मौजूद हैं। कुछ स्थलों पर जौ (*Hordeum vulgare*) और चावल (*Oryza sativa*) भी पाए गए हैं।

नवपाषाण काल के लोगों ने मुख्य रूप से पॉलिश की गई पत्थर की कुल्हाड़ियों, पत्थर से बने ब्लेडों, चाकुओं, गँडासों, खुरचनियों और अन्य उपकरणों का उपयोग किया। तांबे और कांस्य के पुरावशेष बाद के काल में पाए जाते थे। वे अनाज को पीसने के लिए चक्की का उपयोग करते थे, फूस के घरों का निर्माण करते थे और धूल के रंग (Grey) व भूरे रंग के हस्तनिर्मित, पके हुए बर्तनों का इस्तेमाल करते थे। मिट्टी के बर्तनों में से कुछ पर चित्र बने होते थे, किंतु इनकी संख्या कम थी ।

बुदिहल (हुंस्गी घाटी) स्थल कर्नाटक में है। राख के टीले वाली जगह पर मृत बालकों को दफन करने, मवेशियों को काटने और मृतकों को दफनाने के सबूत मिले हैं। जल संचयन के साक्ष्य भी मिले हैं।

4.5 सामाजिक संगठन और आस्था प्रणाली

नवपाषाण काल के लोगों के सामाजिक संगठन को समझने के प्रमाण बहुत सीमित हैं। लोग स्थानबद्ध और अर्ध-स्थानबद्ध बस्तियों में रहने लगे थे। उनका सामाजिक संगठन शायद जनजाति स्तर का था। भूमि और पौधों के स्वामित्व का विचार उभरा, क्योंकि उन्होंने पौधों को उगाने और जानवरों को पालतू बनाना शुरू किया। छोटे गोदामों की उपस्थिति छोटे परिवारों के अस्तित्व को दर्शाती है। चीनी मिट्टी की वस्तुएँ (Ceramics) और मोती की बनी सामग्री भौतिक, सांस्कृतिक उत्पादन में सुधार को दर्शाते हैं। लोगों ने कुछ क्षेत्रों का सीमांकन किया था। मृतकों को घरों में दफनाया गया था और कभी-कभी जानवरों के दफन के भी सबूत मिले हैं। उस समय के लोगों द्वारा कुछ कर्मकांडों को अपनाने और मृतकों की पूजा करने के बारे में भी पता चलता है। उस समय प्राकृतिक शक्तियों की पूजा की जाती होगी। कला वस्तुओं का साक्ष्य सीमित है तथा पक्की मिट्टी (Terracotta) से बनी मवेशियों की मूर्तियों से ज़मीन के उर्वरक होने के बारे में पता चलता है।

1) सही उत्तर के लिए (✓) व गलत उत्तर के लिए (✕) का चिहन लगाएंः

क) बुर्जहोम में गर्त भवनों (Pit houses) के सबूत हैं। ( )

ख) मेहरगढ़ विश्व में जानवरों और पौधों के वर्चस्व के स्वतंत्र केंद्रों में से एक हो सकता है। ( )

ग) कश्मीर के नवपाषाण स्थल पश्चिम एशिया और चीन के नवपाषाण स्थलों के साथ संपर्क के संभावित सबूत दिखाते हैं। ( )

घ) दक्षिण भारतीय नवपाषाण स्थलों में आस-पास की चट्टानों पर खरोचें और घरों के भीतर मृत मानव को दफनाने के साक्ष्य हैं। ( )

ङ) कंधों वाली कुल्हाड़ी (Shouldered Celt) दक्षिण-पूर्व एशियाई सामग्रियों से मिलती जुलती है। ( )

च) उत्तर-पूर्वी भारतीय नवपाषाण स्थल दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ संपर्क का कोई सबूत नहीं दिखाते हैं। ( )

छ) डोरी से चिह्नित (Cord marked) मृदभांड विंध्य-गंगा घाटी के नवपाषाण स्थलों की एक विशेषता है और चावल के प्रमाण भी यहां नहीं मिलते हैं। ( )

2) रिक्त स्थान भरें

क) नवपाषाण संस्कृतियों ने दुनिया के कुछ हिस्सों में कृषि और पशुपालन का .... (क्रमिक, अचानक) विकास देखा।

ख) पौधा रोपण का सबसे पहला साक्ष्य .... (शिखांत-पुरापााण/ताम्रपाषाण) संस्कृतियों में ....(इज़राइल, पाकिस्तान) के आसपास के क्षेत्रों में पाया जाता है।

ग) एक विचारधारा, जो संस्कृति के अनुकूलन की धारणा के विरुद्ध है, का तर्क है कि दक्षिण-पश्चिमी एशिया में जीवन पूर्व-नवपाषाण काल में शुरू हुआ जो .... (सांस्कृतिक/पर्यावरणीय कारणों) को दर्शाता है, जो नवपाषाण विकास में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे।

घ) शतालहुयुक (Catalyayuk) और जारमो (Jarmo) क्रमशः .... (तुर्की/ईरान) और .... (इराक/सीरिया) में हैं।

4.6 सारांश

इस इकाई में नवपाषाण संस्कृतियों की परिभाषा, प्रकृति और विशेषताओं के बारे में विवरण प्रस्तुत किया गया है। वास्तव में, घुमंतु शिकारी जीवन से खाद्य-उत्पादन तक का संक्रमण सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में महत्वपूर्ण बदलाव लाया। प्रारंभिक भारतीय गांवों की नींव नवपाषाण काल में रखी गई थी। भारत ने विभिन्न भागों में नवपाषाण संस्कृतियों को देखा। मेहरगढ़ में भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर-पश्चिमी भाग की नवपाषाण संस्कृति की विशेषताओं, जैसे पौधा रोपण और पशुपालन, के शुरुआती प्रमाण मिले हैं। कश्मीर के नवपाषाण स्थलों में गड्ढों में घर बने होने के प्रमाण हैं। ये स्थल हड़प्पा स्थलों और पूर्वी तथा पश्चिम एशिया की संस्कृतियों के साथ संपर्क को दर्शाती है। बेलन घाटी के नवपाषाण स्थलों में डोरी से चित्रित मृदभांड मिले हैं और घुमंतु शिकारी जीवन से लेकर कृषि तक के संक्रमण के प्रमाण मिले हैं। विंध्य की पहाड़ियों और मध्य गंगा घाटी के स्थल बाद के हैं

तथा पौधा रोपण और पशुपालन का प्रमाण दर्शाते हैं। पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भारत के स्थल दक्षिण-पूर्व एशिया में अक्सर कंधे वाली कुल्हाड़ियों (Shoudered Celts) को दर्शाते हैं। इन स्थलों पर पेड़ों की पत्तियों से चित्रित मृदभांडों के पाए जाने के सबूत मिले हैं। दक्षिण भारत के नवपाषाण स्थलों में शुरुआती चरणों में राख के टीले मिले हैं और पौधा रोपण और पशुपालन के प्रमाण भी मिले हैं।

4.7 शब्दावली

AMSL	:	Above Mean Sea Level (औसतन समुद्र स्तर के उपर)।
शिखांत पुरापाषाण (Epi-Palaeolithic) काल	:	यह पुरा पाषाण काल की समाप्ति को संदर्भित करता है।
अभिनूतन (Holocene)युग	:	आधुनिक युग जिसकी शुरुआत 11,500 वर्ष पहले हुई।
शिकार-भोजन संग्रहण (Hunting-Gathering)	:	जीवन निर्वाह की एक विधा। जानवरों, पक्षियों, मोलस्कों (Molluscs) और मछलियों का शिकार करना तथा फल, अखरोट, पत्तियाँ, डंठल और जड़ों जैसे पौधों के खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करने का कार्य।
घुमंतु	:	एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना।
OSL तिथि-निर्धारण	:	Optically Stimulated Luminescence Dating (प्रकाशीय संदीप्ति चमक प्रणाली से पदार्थों की उम्र का निर्धारण)।
प्रातिनूतन काल	:	चार युगों में पहला युग। यह अभिनूतन युग (Holocene) के पहले व अतिनूतन युग (Pliocene) के बाद का काल था।
आद्य-नवपाषाण (Proto-Neolithic) काल	:	संस्कृतियां जो नवपाषाण काल से पहले थीं।
गतिरहित जीवन शैली (Sedentism)	:	यह एक स्थान पर लोगों के स्थायी निवास को दर्शाता है, जो एक विशिष्ट स्थान पर लंबे समय तक निवास करते हैं।
अर्ध-स्थायी (Semi-Sedentary)	:	वर्ष के एक विशिष्ट मौसम में एक स्थल पर रहने वाले प्रवासी समुदाय।
झूम कृषि (Shifting Cultivation)	:	खेती के लिए जंगल को जलाकर भूखंड का निर्माण तथा एक मौसम के बाद अगले भूखंड में कृषि को स्थानांतरित करने की प्रक्रिया।
Wattle-and-Daub (लकड़ी से बना व मिट्टी से पुता घर)	:	एक प्रकार का घर जिसकी दीवारें लकड़ी के तख्ते से बनी और मिट्टी से पुती होती थीं। इन दीवारों के निशान तभी पाए जाते हैं जब लकड़ी के तख्ते गलती से जल जाते हैं। नवपाषाण स्थलों में ऐसे घरों के अवशेष पाए गए हैं।

हिम युग : हिम युग की शुरुआत लगभग 26 लाख वर्ष पहले हुई जब प्रातिनूतन (Pleistocene) युग की शुरुआत हुई। यह प्रातिनूतन युग के साथ समाप्त हुआ।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) उप-भाग 4.3.1 देखें।

2) उप-भाग 4.3.2 देखें।

बोध प्रश्न-2

3) क) ✓ ख) ✓ ग) ✓ घ) ✓ ङ) ×
च) × छ) ✓

4) क) क्रमिक, ख) शिखांत पुरापाषाण, इज़राइल, ग) सांस्कृतिक, घ) तुर्की, इराक

4.9 संदर्भ ग्रंथ

ऑल्चिन, ब्रिजेट और रेमंड (1989). *द राइज़ ऑफ सिविलाइज़ेशन इन इंडिया एंड पाकिस्तान.* दिल्लीः सेलेक्ट बुक सर्विस सिंडीकेट ।

चक्रवर्ती, डी. के. (2006). *द ऑक्सफ़ोर्ड कम्पैनियन टू इंडियन आर्कियोलोजीः द आर्कियोलॉजिकल फ़ाउंडेशन्स ऑफ़ एंशिएंट इंडिया.* ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पदैय्या, के. (1973). *इनवैस्टीगेशन्स इंटू द नियोलिथिक कल्चर ऑफ द शोरापुर दोआब, साउथ इंडिया.* लाइडेनः ब्रिल।

संकलिया, एच. डी. (1974): *प्रीहिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री इन इंडिया एंड पाकिस्तान.* पुणेः डेक्कन कॉलेज.

सिंह, उपिंदर (2008). *ए हिस्ट्री ऑफ एंशियंट एंड अर्ली मेडीवल इंडियाः फ्रॉम द स्टोन एज टू द ट्वैल्फ्थ सेंचुरी.* दिल्लीः पीयरसन और लॉन्गमैन।

वेब संसाधन

http://www.sciencemag.org/news/2017/06/carved-human-skulls-found-ancient-stone-temple

10.1146/annurev.anthro.31.040402.085416.

Doi: 10.1007/s10963-006-9006-8

Doi: http://antiquity.ac.uk/ant/084/ant0840621.htm

Doi: http://www.homepages.ucl.ac.uk/~tcrndfu/web_project/arch_back.html

Doi: https://doi.org/10.1080/02666030.1998.9628556